P: ISSN No. 2231-0045 RNI No. UPBIL/2012/55438 VOL.-IV, ISSUE-III, February-2016
E: ISSN No. 2349-9435 Periodic Research

# दर्शन में श्रीमद्भगवद् गीता का महत्व

**अंजलि यादव**
प्रवक्ता,
संस्कृत विभाग,
ज्वाला देवी विद्या मन्दिर स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
कानपुर

**सारांश**

श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन विश्वबन्धुता के लिए तथा वसुधैवकुटुम्बकम् की अवधारणा को चरितार्थ करने के लिए परम् आवश्यक है। भारतीय सामाजिक अवसंरचना बहुभाषी व बहुधर्मी है। जिसमें अनेक धर्मों व सम्प्रदायों तथा जातियों, जनमजातियों, समुदायों के लोग रहते है। सम्प्रति साम्प्रदायिकता, आतंकवाद, नक्सली हिंसा व जातिवाद ये ऐसे असामाजिक अवांछित तत्व है जो देश की एकता और अखण्डता को गम्भीर चुनौती दे रहे हैं। अतएव देश की एकता और अखण्डता को तथा सामाजिक समरसता को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन और अध्यापन वर्तमान युग में प्रासंगिक ही नहीं अपितु परम् आवश्यक है।

**मुख्य शब्दः** श्रीमदभगवद्गीता, आस्तिक दर्शन, नास्तिक दर्शन, शरणागति, अनासक्ति योग।

**पस्तावना**

दार्शनिक परम्परा में ''श्रीमद्भगवद् गीता का महत्व'' सर्वोपरि है। सत्य तो यह है कि जहॉ समस्त विषयों के चिन्तन की पराकाष्ठा समाप्त होती है वहीं से दर्शनशास्त्र की शुरूआत होती है और दर्शन में भी जहॉ समस्त दर्शन की विधाओं का अन्त होता है वहीं से ''श्रीमद्भगवद् गीता'' का बहु आयामी चिन्तन आरम्भ होता है। ''श्रीमद्भगवद् गीता'' का दर्शन मनुष्य को केन्द्र में रखकर प्रवाहित होता है। इसका क्षेत्र सम्पूर्ण मानव समाज है। इसकी परिधि में मानव मात्र का हित एवं उसकी समस्यायें हैं। इसमें वर्तमान विश्व की समस्त समस्याओं का समाधान निहित है। ''श्रीमद्भगवद् गीता'' में उन प्रवृत्तियों के त्याग की बात कही गयी है जो मानव का अवमूल्यन करते हैं। आज विश्व औद्योगीकरण, मशीनरीकरण, आधुनिकीकरण की ओर गतिशील है। सम्प्रति मशीनों के जंजाल में मनुष्य अकेला हो गया है उसकी मनोवृत्तियों विभिन्न विरोधाभासों से ग्रसित हो चुकी हैं वह किंकर्तव्यंविमूढ़ हो गया है। ऐसे में ''श्रीमद्भगवद् गीता'' से वह प्रेरणा ले सकता है और सामाजिक उच्चादर्शों को स्थापित कर सुखमय जीवन–यापन कर सकता है।

**श्रीमद्भगवद्गीता के अध्ययन का उद्देश्य**

श्रीमद्भगवद्गीता के अध्ययन द्वारा जगत् में हो रहे नैतिक मूल्या के ह्रास को रोका जा सकता है। इसके श्रवण–मनन से व्यक्ति संसार की किसी भी चुनौती का समाधान करने में समर्थ हो सकता है। गीता ने महाभारत जैसे युद्ध की समस्या का समाधान कर दिया, जिसकी तुलना में आज की समस्याएं तुच्छ हैं। यह मानव जीवन को सफल बनाने में समर्थ है। गीता का मुख्य उपदेश लोक कल्याण है। आज के युग में जब मानव स्वार्थ की भावना से ग्रसित होकर निजी लाभ के सम्बन्ध में सोचता है तो गीता के अध्ययन से मानव को परार्थ भावना का विकास करने में सफलता मिल सकती है।

अध्यात्म वीथिका की सुरम्य, सुवासित पंक्तियों के मध्य वृक्षावली से श्रीमद्भगवद्गीता के कल्याणमय उपदेश भवदुःखदुःखित, संसार तापतापित, जगत् क्लेश क्लेशित जनों के लिए दुःख निवारक, तापहारक तथा सुखदायक हैं। अद्यावधि इस अमूल्य निथि का बहुविधसेवन सुधीजनों द्वारा किया जाता है। हिन्दुओं का यह पावन ग्रन्थ तो आज विश्व की पावन निधि बन चुका है। शंकराचार्य का दार्शनिक सिद्वान्त है – अद्वैतवेदांत। ब्रह्म सत्य है और जगत् मिथ्या है तथा ब्रह्म निर्गुण, निर्वैयक्ति सार्वभौम चेतन सत्ता है। यह जगत् माया का रचा हुआ है और माया न सत् है न असत्, वह अनिर्वाचनीय है। ज्ञान द्वारा हमें माया–मोह को त्यागना चाहिए और शुद्ध ब्रह्म रूप, जो हम हैं, हो जाना चाहिए।

यही अर्थ उन्हें गीता में मिला और प्रमाणित किया। कर्म करना अज्ञान की स्थिति के लिए ध्येय है, ज्ञान की अंतिम स्थिति तो सर्वथा निष्क्रिय है। भक्ति भी प्रारम्भिक अवस्थाओं के लिए हैं।

शंकर का अद्वैत वेदान्त भारतीय चिन्तन तथा जीवन की बड़ी प्रभावशाली धारा है। रामानुज आचार्य का दार्शनिक विचार विशिष्ट अद्वैत कहलाता है। यह भी अद्वैत है, अथति, अन्त में एक ही सत्ता को मानता है परन्तु इतनी विशेषता और है कि नए तत्व और आत्मायें भी सत्य है। अतः जगत् मिथ्या नहीं, सत्य है।

यह दर्शन भक्ति का विशेष पोषक है। अतः रामानुज अपने गीता भाष्य में भक्ति पर बहुत बल देते है। भक्ति का मार्ग ज्ञान से भिन्न है। भक्ति कहती है– भर जाओ परमेश्वर से। भगवान ही बने रक्त का प्रवाह, वही अस्थि हो, वहीं मॉस– मज्जा हो। सच्चा भक्त वही है, जिसके रोऍं–रोऍं में भगवान समाया हो।

आस्तिक दर्शन परमात्मा, जीव और जगत् की सत्ता स्वीकार करता है। गीता में कहा गया है – जो स्वीकार करता है। गीता में कहा गया है – जो तुम्हारे सामने दिखता है यह जगत प्रत्येक मनुष्य को ''मैं हूँ'' ऐसा अनुभव होता है – यह जीव है, जो जड़–चेतन, अपरा–परा सबका स्वमी है वह ईश्वर है –

**न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिया।**
**न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम्।।**[1]

गीता ने व्यवहार में परमार्थ की विलक्षण कला बताई है जिसमें प्रत्येक मनुष्य प्रत्येक परिस्थिति में रहते हुए भी अपना कल्याण कर सके।

**सर्वकमण्यिपि सदा कुर्वाणो मद्वयपाश्रय।**
**मत्प्रसादवात्नोति शाश्वतं पद मत्यमम्।।**[2]

मेरा आश्रय लेने वाला भक्त सदा सब विहित कर्म करते हुए भी मेरी कृपा से शारवत् अविनाशी पद को प्राप्त हो जाता है। गीता के अनुसार आप जहां है, जिस मत को स्वीकार करते है– चाहे वह आस्तिक हो या नास्तिक उसी को मानते हुए गीता के अनुसार चले तो कल्याण हो जाएगा।

हम जो भी व्यवहार करते हैं उसमें अपने स्वार्थ और अभिमान का आग्रह त्यागकर सबके हित की दृष्टि से कार्य करना चाहिए। वर्तमान में भी हित हो, भविष्य में भी हित हो, हमार भी हित हो, दूसरो का भी हित हो– ऐसी दृष्टि रखकर कार्य करना चाहिए। इस प्रकार व्यवहार करने से परमात्मतत्व की प्राप्ति हो जाएगी।

सिद्धि असिद्धि में सम रहकर कार्य करना ही गीता के अनुसार व्यवहार करना है –

**सुख–दुःख समें कृत्वा लाभालाभौ जया जयौ।**
**ततो युद्वाय युज्यस्व नैवं पापं वाष्यसि।।**[3] **2/38**
**योगस्थः कुरू कर्मणि सड़ग तयक्त्वा धनज्जय**
**सिद्धयसिद्धयों समो भूत्वा समत्वं योग उच्येते।।**[4]
**2/48**

भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते है कि तुम्हें कर्मफल के प्रति माहे को त्यागकर सुख–दुःख आदि द्वन्द्वो में समान भाव रखकर कर्म करना चाहिए इसी समत्व भाव के योग कहा जाता है।

भगवान श्री कृष्ण कहते हैं – हे अर्जुन ! यदि मैं कर्म करने से एक क्षण के लिए भी रूक जाऊँ तो सारा विश्व नष्ट हो जाएगा। ईश्वर अनासक्त क्यों है ? इसलिए कि वे सच्चे प्रेमी है, उस सच्चे प्रेमी से ही हम अनासक्त हो सकते हैं। जहां कही आसक्ति हैं, वहां जान लेना चाहिए कि केवल भौतिक आर्कषण है।[5]

भद्भगवद्गीता में शरणागति के विषय में भगवान अपनी शरण में आने की आज्ञा देते है – मामेकं शरणं व्रज शरणागति की अपार महिमा है।[6] 18/66 जो व्यक्ति शरणागति को स्वीकार कर लेता है उसका जीवन धन्य हो जाता है। बिना पढ़े उसमें वेदों का तात्पर्य स्वतः स्फुरित हो जाएगा। उसके लिए कुछ भी जानना, पाना और करना शेष नही रह जाता है।

अनासक्ति योग का वर्णन भी गीता में वर्णित है। अनासक्ति योग का अर्थ है जिसके साथ हमारा कभी संयोग ही नही हुआ है, न होगा, न होना सम्भव है, उसे संसार से अनासक्त होकर योग का अनुभव हो जाना[7]

आसक्ति मिटने पर संसार के अभाव और परमात्मा के भाव का अनुभव हो जाता है –

**नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।**
**उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्वदर्शिभिः।।**[8] **2/16**

भगवान् श्री कृष्ण कहते है– हे अर्जुन ! तत्वज्ञानी महापुरूष ही सत् तथा असत् तत्व को जान सकता है, जो पदार्थ सत् है, अविनाशी है, शा"वत हैं, चिरन्तन वस्तु है उसका कभी विनाश ही नही होता है, क्योंकि त्रिकालाबाधित होने से भूत, भविष्य तथा वर्तमान तीनों काल उसे नष्ट नही कर सकते हैं और जो वस्तु असत् है, विनाशी है, अनित्य है वह स्थायी, नित्य तीनों कालो में रह ही नही सकता है। अतः यह दिखाई देने वाला पंच भौतिक शरीर विनाशी है, विनाश होना उसका धर्म है, अतः शरीर के प्रति आसक्ति नही रखना चाहिए।

विशेष ज्ञान सम्पन्न योगी के लिए सभी प्राणी आत्मा ही हो जाते है उस अवस्था में एकत्व का अनुभव कर लेने वाले पुरूष को कौन सा मोह और कौन सा शोक? अर्थात, किसी भी प्रकार का मोह और शोक नही होता है।[9]

**यस्मिन् सर्वणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।**
**तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः।**
**ईशोपनिषद्**[10]

**आधुनिक युग में श्रीभद्भगवद्गीता की उपादेयता**

वर्तमान युग में मनुष्य भौतिकता की चकाचौंध में धिरा हुआ स्वयं को नितान्त असहाय महसूस कर रहा है ऐसी स्थिति में भगवद्गीता में विद्यमान आध्यात्मिक ज्ञान मनुष्य का मार्गदर्शन करते हैं । गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ की स्थिति हो या निष्काम कर्मयोग व ज्ञानभोग का प्रसंग हो सभी प्रसंग एक ही मोक्ष तत्व का उपदेश देते हैं । इनमें से एक भी तत्व को स्वीकार कर लेने से भौतिकता का प्रभाव कम हो सकता है । समसामयिक परिस्थितियों में भी यह समाज को जीवन के विविध क्षेत्रों में नवीन दृष्टि देने मे सक्षम है ।

**''द्वौ भूतरनर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च''।**

आज के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जहां विश्व में परिस्थितियॉ बदल रही है। परिवर्तन की लहर हमें वर्तमान संदर्भ में सोचने के लिए प्रेरित करती है। नामक कृष्ण अर्जुन को दर्शन एवं धर्म की शिक्षा देते हैं क्या आज भी आवश्यकता नही है पतित होने से कैसे बचा जाए? गीता के दर्शन व साहित्य को व्यवहार में किस प्रकार उतारा जाए? अर्जुन को स्वधर्म का पालन करने को कहना– धर्म युद्व से पीछे नहीं हटना या यह भी कहा जा सकता है कि सभी व्यक्ति अपने अपने धम्र, दायित्व का पालन करों जो उन्हें ईश्वर ने दिया है। समाज और परिवार के प्रति कर्त्तत्य के साथ साथ अपने आत्मकल्याण का उत्तरदायित्व भी है।

अतः भगवद्गीता बदलते सामाजिक परिदृश्यों में अपनी महत्ता को बनाये हुये है तथा अधिक बौद्वगम्य बनाने का प्रयास किया है। गीता में वर्तमान में धर्म से ज्यादा जीवन के प्रति अपने दृष्टिकोण को लेकर भारत में ही नहीं विदेशों में भी लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रही है।

भगवद्गीता एक ऐसी नींव की पत्थर है, जिस पर किसी भी राष्ट्र की एकता का भवन सदृढता के साथ खड़ा रह सकता है। इतने महान अद्वितीय ग्रन्थ की विरासत लेकर ही यह भारत देश 'विश्व गुरू' के पद पर प्रतिष्ठित हुआ है।

**निष्कर्ष**

इस प्रकार अना"क्त होते ही भगवान के साथ नित्य सम्बन्ध का अनुभव स्वतः हो जाता है। भगवान के साथ सम्बन्ध जोड़ने से आसक्ति मिट जाती है। कर्मयोग और ज्ञान योग आ"क्ति का नाश करते हैं, और आसक्ति का नाश होने पर भगवान् के साथ सम्बन्ध हो जाता है।

श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन विश्वबन्धुता के लिए तथा वसुधैवकुटुम्बकम् की अवधारणा को चरितार्थ करने के लिए परम् आवश्यक है। भारतीय सामाजिक अवसंरचना तथा जातियों, जनमजातियों, समुदायों के लोग रहते है। अतएव देश की एकता और अखण्डता को तथा सामाजिक समरसता को अक्षुण बनाये रखने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन और अध्यापन वर्तमान युग में प्रासंगिक ही नहीं अपितु परम् आवश्यक है।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**

1. श्रीभद्भगवद्गीता 2/12
2. श्रीभद्भगवद्गीता 18/56
3. श्रीभद्भगवद्गीता 2/38
4. श्रीभद्भगवद्गीता 2/48
5. कर्मयोग स्वमी विवेकानन्द पृष्ठ सं0 40
6. श्रीभद्भगवद्गीता 18/66
7. गीता का अनासक्ति योग पृष्ठ सं0 87 स्वामी रामसुखदास
8. श्रीभद्भगवद्गीता 2/16
9. वाड़मयम् पृष्ठ 89
10. ईशावास्योपनिषद पृष्ठ 6